ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor (RJIF): 8.4
IJAR 2025; 11(2): 192-196
www.allresearchjournal.com
Received: 17-12-2024
Accepted: 21-01-2025

चेतना मीणा
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावटी विश्विद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
चेतना मीणा
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावटी विश्विद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

सुशीला टाकभौरे के 'ज़रा समझो' कहानी संग्रह में दलित व स्त्री विमर्श

चेतना मीणा

DOI: https://doi.org/10.22271/allresearch.2025.v11.i2c.12360

प्रस्तावना

दिन प्रतिदिन होती विज्ञान की उन्नति और सभ्यता के विकास के साथ - साथ मनुष्य के विचारों में भी परिवर्तन आया है, परन्तु यह परिवर्तन अभी पूर्ण परिवर्तन नहीं कहा जा सकता। क्योंकि समाज के वंचित वर्ग जिनमें स्त्री, दलित, कमजोर और मजदूर वर्ग सम्मिलित हैं, के विकास में आज भी अनेक बाधाएँ विद्यमान हैं। ये बाधाएँ न सिर्फ सामाजिक हैं बल्कि आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक तथा वैचारिक भी हैं।

हम एक ऐसे समाज में रहते हैं जहाँ कर्म को नहीं जन्म को वर्ण व्यवस्था का आधार मान लिया गया है और उसी वर्ण व्यवस्था के अनुसार मनुष्य जीवन जीते हैं और जीने को मजबूर किये जाते हैं। जहाँ एक ओर तथाकथित उच्च जाति के सवर्ण लोग स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मान कर अन्य जाति के लोगों के साथ दुर्व्यवहार और अत्याचार करते हैं, वे स्वयं को समाज व्यवस्था के शिखर पर स्थापित कर अन्य सभी को घृणा और हीनता के भाव से देखते हैं। वो चाहते हैं कि समाज की सभी सुख-सुविधाओं, शिक्षा और सम्मान पर केवल उनका एकछत्र अधिकार रहे। वहीं दूसरी ओर तथाकथित निम्न जाति के अवर्ण लोग अपने अधिकारों से अनभिज्ञ रहते हुए सवर्णों के अत्याचार और वर्ण व्यवस्था के दंश को झेलने पर मजबूर हैं। शिक्षा के अभाव में वे अपनी दीन-हीन अवस्था, अभावों से भरी ज़िंदगी तथा अनेक आर्थिक, सामाजिक समस्याओं को अपना भाग्य समझकर स्वीकार कर लेते हैं। उनके मन में तथा उनके विचारों में अन्याय के प्रति विद्रोह और समाज व्यवस्था के परिवर्तन की बात उत्पन्न ही नहीं होती; उन्हें अपनी जीवन अवस्था पर गुस्सा तो आता है लेकिन अंततः वे उस गुस्से को पी जाते हैं और पुनः उसी ढर्रे पर जीवन जीने लगते हैं।

न सिर्फ दलित बल्कि स्त्रियों की स्थिति भी हमारे समाज में बहुत खराब है फिर चाहे वो स्त्री सवर्ण समाज की हो या अवर्ण अथवा दलित समाज की। इस पर भी ये बात ध्यान देने योग्य है कि दलित स्त्री का जीवन अधिक कठिन होता है क्योंकि उसे स्त्री होने के साथ-साथ दलित होने की दोहरी मार झेलनी पड़ती है। जिस प्रकार वर्ण व्यवस्था में दलितों को सबसे निचले पायदान पर रखा जाता है उसी प्रकार लिंग के आधार पर स्त्रियों को दूसरे दर्जे का प्राणी माना जाता है। परिवार और समाज की मान मर्यादा के नाम पर स्त्री के अधिकार छीन लिए जाते हैं और उसे परम्पराओं व रूढ़ियों के बन्धनों में बांध कर पशुवत जीवन जीने के लिए मजबूर किया जाता है।

सुशीला टाकभौरे जी जो दलित साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका हैं ने अपने 'जरा समझो' कहानी संग्रह में दलितों और स्त्रियों के जीवन की समस्याओं पर कहानियाँ लिखी हैं। सुशीला जी स्वयं कहती हैं कि "मेरे लेखन का उद्देश्य प्रमुख रूप से दलित विमर्श और स्त्री विमर्श है। इस दृष्टि से शोषित, पीड़ित एवं मानवीय अधिकारों से वंचित दलितों और स्त्री वर्ग की वास्तविक स्थिति से समाज को परिचित कराने का प्रयत्न है। यह हमारे समाज का सत्य है जो सामाजिक रीति रिवाजों की परम्पराओं एवं धर्मान्धता के कारण सदियों से चला आ रहा है। इसके कारण 21वीं शताब्दी में अभी भी वर्ण भेद, जाति भेद और लिंग भेद की मानसिकता समाज में व्याप्त है। यह उनके शोषण और अन्याय के प्रमुख कारण हैं"। (1)

जरा समझो कहानी संग्रह की 'सिलिया' कहानी में दिखाया गया है कि किस प्रकार शिक्षा और कड़ी मेहनत के बल पर सम्मान पाया जा सकता है। सिलिया के माध्यम से सुशीला जी दलित समाज को शिक्षा के प्रति जागरूकता का संदेश देती हैं। सिलिया के बचपन की घटनाओं में समाज में व्याप्त जाति भेद की भयानक तस्वीर नजर आती है जिसमें सिलिया की ममेरी बहन और स्वयं सिलिया को प्यास लगने पर भी पीने के लिए पानी न मिल पाने का एकमात्र कारण उनका निम्न जाति से होना था। बरसों पुरानी जाति भेद से सम्बंधित घटनायें जब सिलिया की स्मृति में कौंधती हैं तो विचारों की उथल-पुथल मच जाती है, उसके मन में जाति व्यवस्था के विरुद्ध प्रश्न खड़े हो जाते हैं। सिलिया को दलित जीवन की समस्याओं और अपने प्रश्नों का एक ही समाधान दिखाई देता है कि वह पढ़ लिखकर समाज में सम्मान के उच्च स्तर पर पहुंचे। वह न केवल स्वयं के बल्कि अपनी जाति समुदाय के जीवन स्तर को भी सुधारना चाहती है, वह दलितों की प्रगति के मार्ग को प्रशस्त करना चाहती है और चाहती है कि उसका समाज सम्मान व अपमान के भेद को समझें तथा सही अर्थों में सम्मान का अधिकारी बने।

इसी प्रकार 'बदला' कहानी में सुशीला जी ने दलितों पर होने वाले अन्याय व अत्याचारों का चित्र प्रस्तुत किया है। वो कहती हैं-" कोई भी कालखंड रहा हो, अन्याय अत्याचार की घटनाएं हमेशा होती रही हैं। शक्तिशाली दुराचारी लोग शक्तिहीनों पर अत्याचार करते आए हैं। बल्कि कहना यह चाहिए कि शक्तिशाली शोषक वर्ग अन्याय अत्याचारों के द्वारा दलित पिछड़े शक्तिहीनों को और अधिक निर्बल और लाचार बनाते रहे हैं। दुष्ट सवर्ण अपनी शक्ति का दुरुपयोग भी करते हैं"।(2) इस कहानी में बताया गया है कि यूं तो शिक्षण संस्थानों में शिक्षक, देश के नेता, साधु-संत, महात्मा आदि सभी लोग समानता की बात करते हैं परंतु यह समानता केवल ऊपरी तौर पर है। क्योंकि समाज में वर्णव्यवस्था और जातिभेद आज भी विद्यमान है। शिक्षा और जागरूकता के अभाव में दलित लोग समाज व्यवस्था व न्याय व्यवस्था के परिवर्तनों से अनजान हैं उन्हें नहीं पता कि संविधान में उन्हें क्या अधिकार प्राप्त हैं। छौआ माँ जो गांव के सभी लोगों को अपना मानती थी और सभी की मदद के लिए हमेशा तत्पर

रहती थी; जब उन्हें गांव वालों से अपमान भरी कड़वी बातें सुननी पडती हैं तो लज्जा, ग्लानि व अपमान से भर उठती है और व्यथित होकर ज़ोर से रो पड़ती है। कहानी के अंत में दिखाया है कि किस प्रकार बदले की भावना ने दलितों में आत्मविश्वास की भावना को जन्म दिया और दलित पिछड़ी जातियां एकता व भाईचारे के बंधन में बंध गईं। उन्हें शिक्षा, संघर्ष और संगठन की ताकत का एहसास हुआ और आगे चलकर यही उनका सबसे बड़ा हथियार बना।

'सलीम की अनारो' कहानी के माध्यम से समाज में प्रचलित रंग भेद की समस्या को उभारा गया है, जिसमें सलीम जैसे लोगों की मानसिकता को दर्शाया है जिनके लिए खूबसूरती का प्रमुख पैमाना ही गोरा रंग होना है। सलीम सोचता है कि यह जिंदगी भर का सवाल है, केवल अपनी जिंदगी का ही नहीं अगली पीढ़ी का भी सवाल है। उसे लगता है कि गोरे, सुंदर, खूबसूरत बच्चों के जन्म के लिए गोरी और सुंदर मां का होना आवश्यक है। परंतु जब निकाह के वक्त दो बार पूछने पर भी दुल्हन ने 'कबूल है' नहीं कहा तब सलीम को अपनी गलती का एहसास होता है और वह समझ जाता है कि खूबसूरती, रंग-रूप मनुष्य के अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं, वह स्वयं इन्हें गढ़ या बना नहीं सकता तथा न ही इच्छानुसार प्राप्त कर सकता है। यह सब ऊपर वाले की देन है तो फिर मनुष्य को कोई हक नहीं है कि वह किसी के रंग-रूप या खूबसूरती के लिए उसका अपमान करे या उसे अयोग्य अथवा कमतर समझे।

'आतंक के साये में' तथा 'ज़रा समझो' कहानियों में समाज में व्याप्त जातिभेद व वर्णभेद की कड़वी सच्चाई को बताया गया है। साथ ही बताया गया है कि लड़कियों, महिलाओं को अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में ऐसी अनेक घूरती हुई, चुभती हुई नजरों का सामना करना पड़ता है जिनसे वे न केवल असहज हो जाती हैं बल्कि कई बार बेहद डर जाती हैं। इस तरह की नजरों का नुकीलापन देखने वाले की खराब नियत का द्योतक है जो स्त्रियों तथा समाज में असुरक्षा की भावना पैदा करता है। "उनमें वह विशेष आँखों वाला विशेष व्यक्ति है, जिसने समाज को वर्णवादी-जातिवादी परंपराओं में जकड़े रखने का, पुरानी रूढ़िवादी परंपराओं को चिरजीवी बनाए रखने का बीड़ा उठाया है"।(3) इस कहानी में सुशीला जी ने वर्ण व्यवस्था को एक प्रकार का आतंकवाद बताया है। वो कहती हैं- "आतंकवाद का लक्ष्य है- बेकसूरों को भयभीत करना, उन्हें नेस्तनाबूद कर देना"।(4)

इस कहानी संग्रह की 'रामकली' कहानी में दलित विमर्श के साथ-साथ स्त्री विमर्श भी है। इस कहानी की पृष्ठभूमि के लिए सुशीला जी ने अपने जन्मस्थल को ही चुना है। सुशीला जी के साहित्य में उनके अपने जीवन की झलक कभी स्थान, कभी चरित्रों तथा कभी घटनाओं के रूप में दिखाई देती है। इस कहानी में सुशीला जी छुआछूत के चरम स्तर को बताती हुई लिखती हैं "अछूत कहे जाने वाले लोग कभी-कभी एक-दूसरे के घर चाय, पानी पी लेते थे। मगर अधिकतर अछूत भी जातिवाद को मानते हुए आपस में छुआछूत मानते थे"।(5) रामकली कहानी में निम्न मानी जाने वाली कंजर जाति और उस जाति की महिलाओं के जीवन की समस्याओं का चित्रण किया गया है। कंजर जाति की महिलाओं के कठिन जीवन का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि विवाह के समय शुरू होनी वाली चरित्र परीक्षण की परीक्षाएं विवाह के बाद भी कई रूपों में बार-बार देनी पड़ती हैं और किसी भी परीक्षा में असफल रहने पर लड़की के चरित्र और सम्मान पर प्रश्न खड़े कर दिए जाते हैं। ऐसे प्रश्न जिनका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है बल्कि वे प्रश्न पूरी तरह उस कंजर दलित समाज की रूढ़िगत परम्पराओं और अंधविश्वास पर आधारित थे। इस कहानी के माध्यम से सुशीला जी ने कंजर जाति में व्याप्त आर्थिक समस्या जिसके चलते चोरी, बदमाशी

व बेईमानी की ओर ध्यान आकृष्ट किया है तथा नशाखोरी की प्रवृति का भी उल्लेख किया है। रोज़ी-रोटी के लिए किए जाने वाले प्रतिदिन के संघर्ष और गलत कार्य करने पर जेल जाने के बावजूद इन कंजर जाति के लोगों का अपना स्वाभिमान है, सम्मान है और अपनी जीवन पद्धति है। जीवन के संपूर्ण अभावों के बाद भी ये लोग जिंदगी से भरपूर और मौज के साथ जीवन जीते हैं।

'जरा समझो' कहानी में एक तरफ मैनेजर साहब जैसे चरित्रों के माध्यम से बताया गया है कि किस प्रकार सवर्ण लोग अपनी जाति पर अभिमान करते हैं साथ ही तथाकथित निम्न जाति के लोगों को हीनता की दृष्टि से देखते हैं। इतना ही नहीं वे दलित शोषण और अत्याचार की घटनाओं को भी अपने पक्ष में करते हुए तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत करते हैं। सत्य को अनदेखा करते हैं और असत्य को ही सत्य के समान महत्व देखकर अन्य लोगों को गुमराह करते हैं। वहीं दूसरी ओर विजय जैसे लोग जातिभेद के विरोधी बन सामाजिक समानता के पक्षधर होने का ढोंग करते हुए दूसरों से अपना काम करवाते हैं तथा अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु वे दूसरों का फायदा उठाते हैं। खेमचंद जैसे लोग इन लोगों की अवसरवादिता तथा कुटिलता के शिकार हो जाते हैं और अपने भोलेपन में वे उनके दोहरे व्यवहार को समझ नहीं पाते।

'सूरज के आसपास' कहानी में स्त्री के मन में मुक्ति की चाह और पुरुष के रूप में स्त्री पर उसके आतंक को दर्शाया गया है। स्त्री के जीवन पर पुरुष का अधिकार स्वयं स्त्री के अधिकार से अधिक हो जाता है जो स्त्री से मनुष्य होने का हक भी छीन लेता है। 'कड़वा सच' और 'साक्षात्कार' जैसी कहानियों में स्त्री के जीवन की एक ऐसी तस्वीर प्रस्तुत की गई है जिसमें स्त्री योग्य होते हुए भी घर-परिवार और समाज के बंधनों में बंध कर तथा गृहस्थी की जिम्मेदारी में उलझ कर स्वयं को असहाय और परतंत्र महसूस करती है। स्त्री अपने जीवन की समस्याओं में इतनी गहराई से उलझी हुई है कि उसके पास स्वयं के बारे में सोचने का तथा कोई भी निर्णय लेने का समय ही नहीं होता। जो स्त्री घर के बाहर एक सशक्त महिला और ओजस्वी वक्ता के रूप में जानी जाती है वही स्त्री अपने ही साक्षात्कार में किसी भी प्रश्न का स्पष्ट और संतुष्ट उत्तर नहीं दे पाती। प्रत्येक प्रश्न पर वह विचार करने लगती है और किसी भी प्रश्न का उचित उत्तर न पाने पर सोच में पड़ जाती है। उसके स्त्री जीवन के अनुभव और घटनाएं इतने मिले-जुले हैं कि वह चाह कर भी अपने लेखन में कुछ नया नहीं कर पाती तथा वह बार-बार उन्हीं घटनाओं और जीवन अनुभवों की पुनरावृत्ति करती रहती है। ऊपर से सब सामान्य, सहज, व्यवस्थित दिखाने वाली स्त्री का जीवन दुखों, अभावों और बंधनों से भरा हुआ है। घर के बाहर तथा घर के भीतर दोनों ही जगह उसे किसी न किसी पुरुष की कुदृष्टि का सामना करना पड़ता है।

'वह नजर' कहानी में स्त्री के मन की पीड़ा, द्वंद्व तथा टूटे हुए सपनों व यथार्थ का चित्रण किया गया है। स्त्री सामाजिक आडंबरों और मर्यादा के बंधनों में इस प्रकार जकड़ी रहती है कि वह चाह कर भी उन बंधनों से मुक्ति नहीं पा सकती। उसे अंततः अपनी भावनाओं और सपनों का त्याग करना पड़ता है तथा यथार्थ की कड़वी सच्चाई को अपनाकर मजबूरी में जीवन जीना पड़ता है। असमय पनपे प्रेम और आकर्षण के भाव स्त्री के जीवन में उथल-पुथल मचा देते हैं परंतु वह अपने मन की व्यथा किसी से कह भी नहीं सकती, वह अकेली ही उस दुख को भोगने के लिए बाध्य है।

सुशीला जी ने अपनी कहानियों में समाज की विभिन्न समस्याओं जिसमें वर्ण भेद, जाति भेद, लिंग भेद, अशिक्षा, रंगभेद, अंधविश्वास, रूढ़ियों, परंपराओं आदि सभी को समेटने का कार्य किया है। उन्होंने न सिर्फ इन समस्याओं पर प्रश्न चिन्ह खड़े किए हैं बल्कि कई समस्याओं का समाधान भी सुझाया है। सुशीला जी की कहानियाँ मनुष्य को

गहरे चिंतन और मनन के स्तर पर पहुंचा देती हैं और सोचने पर मजबूर करती हैं। ये कहानियाँ मनुष्य में परिवर्तन की चाह उत्पन्न करती हैं और इन समस्याओं से मुक्ति हेतु संघर्ष के लिए प्रेरित करती हैं। दलितों में शिक्षा के महत्व, उनके अधिकारों के प्रति उनकी सजगता, स्त्री के प्रति समाज का नजरिया, स्त्री जीवन की समस्याओं और समाज में व्याप्त बुराइयों की और ध्यान आकर्षित करती हैं।

सन्दर्भ

1. कथारंग की भूमिका मनोगत‘ कथारंग के प्रति’, पृष्ठ संख्या–7
2. जरा समझो, बदला कहानी, पृष्ठ संख्या-33
3. जरा समझो, आतंक के साये में, पृष्ठ संख्या-15
4. जरा समझो, आतंक के साये में, पृष्ठ संख्या-16
5. जरा समझो, रामकली कहानी, पृष्ठ संख्या-93